शाकुन्तलम् – एक फ़ारसी रूपान्तरण

(शकुन्तला या ख़ातमे मफ़क़ूद)

संस्कृत ग्रन्थों के फ़ारसी अनुवादों का इतिहास समृद्ध एवं विस्तृत रहा है [1]। विश्व की अनेकानेक जातियों की तरह ईरानवासी भी भारतीय मेधा से चमत्कृत तथा प्रभावित हुए थे एवं अनुवादों और रूपान्तरणों के माध्यम से बृहत्तर जनता को लाभान्वित करने के लिये प्रयत्नशील भी रहे थे । यह प्रयास इस्लामपूर्व से ही प्रारम्भ हो गया था । फ़ारसी तथा अरबी जगत् में कलीलः व दिम्नः[2] के नाम से रूपान्तरित एवं प्रख्यात पञ्चतन्त्र का अनुवाद इस प्रकार के प्रयत्न का सर्वप्रथम उपलब्ध उदाहरण है । ५७० ईस्वी में सासानी सम्राट् अनूशीरवान् के मन्त्री बुजुर्गमेह्र के द्वारा बरजवै तबीब के माध्यम से इसका अनुवाद पहलवी (मध्यकालीन फारसी) भाषा में कराया गया जो पञ्चतन्त्र के सीरियन तथा अन्य विश्वभाषाओं में अनुवाद का आधार बना ।

मध्यकाल में संस्कृत ग्रन्थों के फ़ारसी अनुवादों की बाढ़ सी आ गयी । फ़ारसी भाषियों ने बारहवीं सदी के प्रारम्भ में आकर दक्षिण एशिया के राजनैतिक परिदृश्य में बहुत बड़ा परिवर्तन उत्पन्न कर दिया था । अगली सात शताब्दियों तक विभिन्न मुस्लिम राजवंशों ने अपनी शक्ति का विस्तार किया तथा अधिकतर ने फ़ारसी को अपनी राजभाषा तथा साहित्यभाषा बनाया । साथ ही इन शासकों ने शासित जनता द्वारा प्रयुक्त भाषा तथा साहित्य की ओर भी रुचि दिखायी जिसमें संस्कृत तथा अन्यान्य भारतीय भाषायें भी थीं । मुग़ल सम्राट् अकबर तथा राजकुमार दारशुकोह का नाम इस क्षेत्र में विशेष रूप से उल्लेखनीय है । तेरहवीं से उन्नीसवीं शताब्दी तक भारतीय ज्ञान परम्परा से सम्बन्धित अनुमानतः तीन सौ ग्रन्थों का प्रणयन फ़ारसी भाषा में हुआ[3] । इन ग्रन्थों का क्षेत्र आश्चर्यजनक रूप से व्यापक है । इनमें धर्म, दर्शन, रहस्यवाद, देवशास्त्र, ज्योतिष, गणित, खगोलशास्त्र, रहस्यवाद, इतिहास, सामान्यविज्ञान, कला,भूगोल, वनस्पतिशास्त्र,पाकशास्त्र आदि विषय सम्मिलित हैं । इन ग्रन्थों के प्रणयन में हिन्दू तथा मुस्लिम दोनों सम्प्रदायों के विद्वानों का सहयोग रहा । ये ग्रन्थ राजदरबार के संरक्षण के अतिरिक्त स्वतन्त्रतया भी प्रणीत हुए।

इन अनुवादों से केवल फ़ारसी साहित्य समृद्ध हुआ हो ऐसी बात नहीं । ये अनुवाद भारतीय दार्शनिक सिद्धान्तों तथा साहित्य को सम्पूर्ण विश्व में फैलाने के साधन भी सिद्ध हुए । उदाहरण के लिये दाराशुकोह द्वारा किये गये ५२ उपनिषदों के अनुवाद “*सिर्रे अकबर*” के माध्यम से ही भारतीय दार्शनिक सिद्धान्त पाश्चात्य

---

[1] विस्तृत सन्दर्भों के लिये देखें – M. Athar Ali, “Translations of Sanskrit Works at Akbar’s Court,” *Social Scientist* 20 (1992): 38 – 45; A. B. M. Habibullah, “Medieval Indo-Persian Literature relating to Hindu Science and Philosophy, 1000 – 1800 A.D.,” *Indian Historical Quarterly* 14 (1938): 167 – 81; S. Rashid Husain, “Some Notable Translations Rendered into Persian during Akbar’s Time,” *Islamic Culture* 55 (1981): 219 – 39; Jivanji Jamshedji Modi, “King Akbar and the Persian Translations of Sanskrit Books,” *Annals of the Bhandarkar Institute* 6 (1925): 83 – 107; S. A. Reza Jalali Naini, “Persian Translations of Sanskrit Works,”in “Special Issue on the Occasion of 50 Years of the Agreement of Indo-Iranian Cultural Relation,” *Journal of the Indo-Iran* (2008): 68 – 86; M. A. Rahim, and N. S. Shukla, “Persian Translations of Sanskrit Works,” *Indological Studies* 3, nos. 1 – 2 (1974): 175 – 91. (विवरण साभार गृहीत – Audrey Truschke –The Mughal Book of War : A Persian Translation of the Sanskrit Mahabharata , p.1,foot note1; Comparative Studies of South Asia, Africa and the Middle East Vol. 31, No. 2, 2011 by Duke University Press)

[2] आधुनिक फ़ारसी में इसका उच्चारण – कलीले व दिम्ने , अरबी तथा उर्दू में कलीला व दिम्ना किया जाता है।

[3] Audrey Truschke - Perso-Indica : a critical survey of Persian works on Indian learned tradition – The News letter no 59 – Spring 2012

विद्वानों तक पहुंच सके तथा उन्हें सम्पूर्ण प्राचीन भारतीय साहित्य के बारे में जिज्ञासा हो सकी तथा इस क्षेत्र में गम्भीर शोधों हो सके। इस अनुवाद साहित्य को सल्तनत काल, मुगलकाल तथा उपनिवेश काल के आधार पर तीन भागों में बांटा जा सकता है, जिनमें से प्रत्येक में अनुवादों की अलग अलग प्रवृत्तियां दिखायी पड़ती हैं।

संस्कृत ग्रन्थों के अनुवाद के प्रसङ्ग में संस्कृत के शुद्ध काव्य साहित्य[i] का उदाहरण हमें बहुत ही अल्प मात्रा में प्राप्त होता है। इसका कारण बहुत ही स्पष्ट है। उपर्युक्त अनुवादों के द्वारा मुस्लिम शासकों का प्रमुख उद्देश्य विजित तथा शासित जनता के धर्म एवं दर्शन को समझ कर उन पर अपने शासन को और अधिक दृढ तथा स्वीकार्य बनाना था साथ ही उनकी शास्त्रीय पुस्तकों के अनुवाद से अपने वैज्ञानिक ज्ञान को समृद्ध करना था। यह कार्य मुस्लिम शासकों ने सदियों पहले यूनानी ग्रन्थों के अरबी अनुवादों से शुरू कर दिया था। अनुवादों के इस उपयोगितावादी दृष्टिकोण को चूँकि काव्यग्रन्थ उतने अनुपात में समर्थित नहीं करते थे अत एव उनके फ़ारसी अनुवादों के उदाहरण हमें सामान्यतः दिखायी नहीं पड़ते। यहां तक कि भारत के परम प्रसिद्ध महाकवि कालिदास के ग्रन्थों का अनुवाद भी इन सात शताब्दियों में दिखायी नहीं देता।

उपनिवेशकाल के प्रारम्भ होने के साथ ही भारत में फ़ारसी की दशा क्षीण होने लगी। इसका कारण था – ७०० सालों तक राजभाषा रही फ़ारसी का स्थान अंग्रेज़ी को दिया जाना। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद अनेक भारतीय फ़ारसी भाषाविदों ने फ़ारसी के ऐतिहासिक तथा सांस्कृतिक महत्त्व को समझते हुए इसके उत्थान के लिये प्रयत्न किये। इन प्रयत्नों में महत्त्वपूर्ण प्रकल्प था भारत तथा ईरान के सहस्राब्दियों से चले आ रहे घनिष्ठ सम्बन्ध को उजागर करना। सुयोग ही था कि उस समय ईरान में रज़ा शाह पहलवी का शासन था जो ईरान के विस्मृत आर्य अतीत को पुनः प्रतिष्ठित करना चाहते थे। उनके काल में तेहरान विश्वविद्यालय में संस्कृत अध्यापन की व्यवस्था हुई थी जो अब तक चलरही है[ii]।

स्वातन्त्र्योत्तर आधुनिक काल में भारत में कई विद्वानों का नाम लिया जा सकता है जिन्होंने फ़ारसी भाषा के प्रचार प्रसार के साथ संस्कृत के साहित्यिक ग्रन्थों के फ़ारसी में अनुवाद भी प्रस्तुत किये। इन विद्वानों के अनुवादों का लक्ष्य मध्यकालीन अनुवादों की अपेक्षा भिन्न था। ये विद्वान् शुद्ध रूप से साहित्यिक रुचियों का उपयोग करके दोनों संस्कृतियों में संश्लेषण उत्पन्न करना चाहते थे। इनमें प्रमुख नाम प्रो॰ इन्दुशेखर (पञ्चतन्त्र), प्रो॰ हादी हसन (अभिज्ञानशाकुन्तल) तथा प्रो॰ अमीर हसन आबिदी (विक्रमोर्वशीय) के हैं। प्रस्तुत लेख में हम प्रो॰ हादी हसन द्वारा किये गये शाकुन्तलम् के फ़ारसी रूपान्तरण पर दृष्टि केन्द्रित करेंगे।

कविकुलगुरु कालिदास को विश्वकवि के रूप में प्रतिष्ठित करने में उनके अनुवादों का बड़ा योगदान है। कालिदास के सर्वस्व अभिज्ञानशाकुन्तलम् का भारत तथा विश्व की लगभग सभी प्रमुख भाषाओं में अनुवाद किया जा चुका है। कालिदास बिब्लियोग्राफी में शाकुन्तलम् के ४० भाषाओं में हुए कुल ३२९ अनुवादों की प्रविष्टियां हैं[4]।

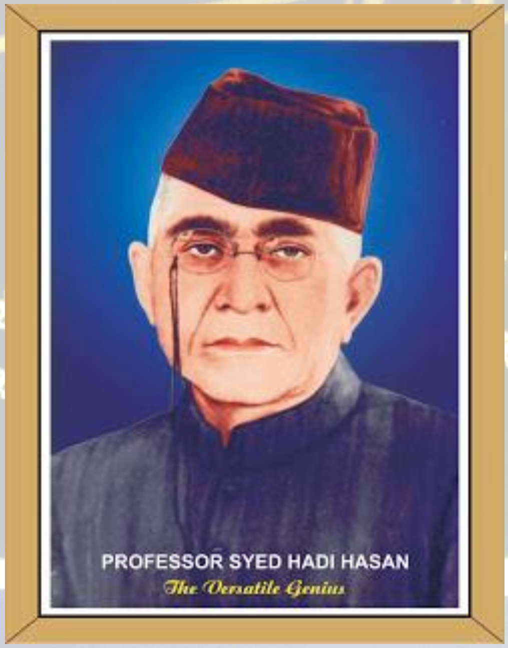
प्रो॰ हादी हसन ने मौलाना अबुल कलाम आज़ाद की इच्छा का सम्मान करते हुए शकुन्तला का यह रूपान्तरण प्रस्तुत किया था[5]। प्रस्तुत पुस्तक १९५६ में भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्ध परिषद् (आइ सी सी आर) द्वारा

---

[4] Kalidasa Bibliography – Satya Pal Narang ,Pp- 166 - 191

[5] अली असगर हिकमत द्वारा लिखी गयी प्रस्तुत पुस्तक की प्रस्तावना से स्पष्ट।

प्रकाशित हुई। रूपान्तरण के विशिष्ट बिन्दुओं पर विचार करने से पहले हमें प्रो॰ हादी हसन के व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व के बारे में किञ्चित् चर्चा करनी आवश्यक है।



रूपान्तरकार प्रो॰ सैयद हादी हसन

आधुनिक भारत में फ़ारसी के प्रसिद्ध विद्वान् प्रो॰ सैयद हादी हसन[6] का जन्म ३ सितम्बर सन् १८९६ में हैदराबाद में हुआ था। उनके पूर्वजों में से अता हुसैन इटावा के ख्यात विद्वान् थे तथा उनके पिता सैयद अमीर हसन निज़ाम हैदराबाद के यहाँ आयुक्त थे। उनके मामा नवाब *'मोहसिन उल् मुल्क'* सैयद मेहदी अली ख़ान सर सैयद अहमद के निकट सहयोगी थे। हादी हसन ने बी॰ एस् सी॰ की डिग्री पुणे के फ़र्गुसन कालेज में प्राप्त की तथा उच्चतर शिक्षा के लिये कैम्ब्रिज चले गये। वहाँ से उन्होंने जीव विज्ञान में डिग्री हासिल की। हादी हसन की इच्छा थी कि वे इंग्लैण्ड में ही रुकें परन्तु भारत के तीव्रतर होते हुए स्वतन्त्रता संग्राम में भाग लेने के लिये वे स्वदेश लौट आये तथा इसमें अपनी सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित की जिसके लिये वे महात्मा गान्धी आदि बड़े नेताओं के प्रशंसा पात्र भी रहे। हादी हसन अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के जीवविज्ञान विभाग में रीडर के पद पर नियुक्त हुए। फ़ारसी भाषा के प्रति अत्यधिक प्रेम के कारण वे एक बार फिर इंग्लैण्ड गये तथा लण्डन स्कूल आफ़ ओरियण्टल स्टडीज़ से फ़ारसी में पी॰एच्डी॰ की उपाधि प्राप्त की। स्वदेश आकर वे अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के फ़ारसी विभाग में आचार्य के पद पर नियुक्त हुए तथा यहाँ पर वे लम्बे समय तक (३ सितम्बर,१९५८) समर्पणपूर्वक सेवारत रहे। प्रो॰ हादी हसन को यह फ़ारसी के प्रति यह अत्यधिक प्रेम अपनी माता से प्राप्त हुआ था जो ईरान मूल की थीं। अलीगढ़ में अपनी सेवा के अतिरिक्त उन्होंने हैदराबाद, पटना तथा लखनऊ विश्वविद्यालयों में फ़ारसी विभागों को प्रारम्भ कराने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। भारत तथा

[6] जो इस लेख में अनेकत्र ***रूपान्तरकार*** के नाम से अभिहित हैं।

ईरान के विद्वानों को एकीकृत करने में उन्होंने महत्त्वपूर्ण योगदान दिया था । फ़िरदौसी कवि के सम्मान में आयोजित सहस्राब्दी समारोह में उन्होंने ईरान में भारत का प्रतिनिधित्व किया था।

प्रो॰ हसन ऊर्वर लेखनी के धनी थे तथा फ़ारसी और अंग्रेजी में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर ख्यात पुस्तकों का प्रणयन किया । उनके प्रमुख प्रकाशनों में से हैं–

Studies in Persian Literature (1923), A History of Persian Navigation (1928) दीवाने फलकी शिर्वानी (1930), Radîu'd-Din-i-Nîshapûrî : His Life and Times (1940),Mughul Poetry : Its Historical and Cultural Value (1952), Qâsim-i-Kâhî (868-988AH) : His Life, Times and Works (1954), दीवाने क़ासिम काही(1956), Majmû'ah-i-Maqâlât (1956), Shakuntala, translated into Persian (1956), Researches in Persian Literature (1958)

उनकी दो पुस्तकें Golden Treasury of Persian Poetry तथा Qâsim-i-Kâhî", का दूसरा भाग उनकी मृत्यु के समय प्रैस में प्रकाशन प्रक्रिया के अन्तर्गत थे ।

प्रो॰ हसन अद्भुत वक्ता तथा अत्यन्त शिष्ट व्यक्तित्व के धनी थे । उनकी योग्यता से प्रभावित होकर १९५६ में अलीगढ़ पधारे ईरान के शाह ने स्वयं को उनके छात्र होने की इच्छा प्रकट की थी । उनके घनिष्ठ मित्र भारत के राष्ट्रपति डा॰ ज़ाकिर हुसैन ने उनके बारे में कहा है कि प्रो॰ हसन उन सबसे विद्वान् व्यक्तियों में से थे जिनसे मैं अब तक मिला हूं[7]। फ़ारसी के अतिरिक्त उनकी रुचि गणित, खगोल विज्ञान तथा संस्कृत नाटकों में भी थी । वे अपने द्वारा अनूदित शाकुन्तल के मञ्चन के समय महत्त्वपूर्ण पात्रों का अभिनय भी स्वयं किया करते थे[8]। उन्होंने सारे भारत में भ्रमण करके अलीगढ़ विश्वविद्यालय में मेडिकल कालेज की स्थापना करने के लिये अकेले ३० लाख रूपये जुटाये थे । उनकी उपर्युक्त विशेषताओं के कारण १९५८ में उन्हें राष्ट्रपति सम्मान प्रदान किया गया । स्वतन्त्रता के बाद प्रो॰ हसन दूसरे व्यक्ति थे जिन्हें यह सम्मान मिला । प्रो॰ हसन का देहावसान २३ मई, १९६३ को हुआ ।

प्रो॰ हसन द्वारा किया गया प्रकृत प्रयत्न अनुवाद न होकर एक सुन्दर तथा संक्षिप्त रूपान्तरण[9] है । इसका नाम उन्होंने *ख़ातमे मफ़क़ूद* अर्थात् खोई अंगूठी रखा है ।सात अङ्कों के पर्याप्त विस्तृत नाटक को उन्होंने सात दृश्यों (पर्दों) में समेट दिया है । संक्षेपण की इस प्रक्रिया की सफलता का प्रमाण यह है कि इस पुनर्रचना में कहीं भी टूटन या अवरोध दृष्टिगोचर नहीं होता । संक्षेपीकरण के लिये उन्होंने कई उपाय अपनाये हैं । अनेकत्र लम्बे लम्बे संवादों को छोटा किया है , बहुत सारे श्लोकों को बिना अनुवाद या रूपान्तरण छोड़ दिया है तथा कहीं कहीं कालिदास की कथा में परिवर्तन भी किया है । शाकुन्तल के विभिन्न वाचनाओं में श्लोकों की संख्या २२५ से लेकर

[7] Dr. Zakir Hussain, Foreword, *Golden Treasury of Persian Literature*, Ed.– Dr. M. Shamoon Israili, 2nd Edition, Indian Council for Cultural Relations, New Delhi, 1972.
[8] Asloob Ahmad Ansari, *So was Professor Hadi Hasan*, Hadi Hasan Hall Magazine, (English),1985,p1.

[9] जो इस लेख में अनेकत्र ***रूपान्तरण*** या ***प्रकृत रूपान्तरण*** तथा उद्धरणों में ***ख़ातमे मफ़क़ूद*** के नाम से अभिहित है ।

१९० तकप्राप्त होती है[10] जबकि प्रस्तुत रूपान्तरण में प्रयुक्त पद्यों की संख्या केवल ६० (प्रति दृश्य २३+४+११+६+५+५+६) ही है। इन परिवर्तनों के बावजूद भी इस रूपान्तरण का सुखद पहलू यह है कि प्रो॰ हसन कहीं भी कालिदासीय भावों से दूर नहीं गये हैं तथा यह पुनर्रचना सर्वथा स्वतन्त्र कृति होने का भान नहीं देती।

इस रूपान्तरण का प्रमुख उद्देश्य था – कालिदासीय प्रतिभा को संक्षिप्त तथा अधिक अभिनेय बनाकर फ़ारसी भाषी जनता के सम्मुख प्रस्तुत करना। लेखक इस उद्देश्य में बड़ी सीमा तक सफल रहे हैं। पुस्तक के प्रारम्भ की प्रस्तावना में भारत में ईरान के तत्कालीन राजदूत महान् शिक्षाविद् डा॰ अली असग़र हिकमत ने कालिदासीय कृतियों के फ़ारसी अनुवाद के अभाव पर खेद व्यक्त करते हुए प्रो॰ हसन के प्रकृत प्रयत्न का अभिनन्दन किया है[11]। इससे यह स्पष्ट होता है कि प्रो॰ हसन का यह प्रयत्न कालिदासीय कविता से नितान्त पृथक् नहीं हो सकता था। प्रो॰ हसन स्वयं संस्कृत नाटकों के बहुत बडे प्रेमी और रङ्गमञ्च तथा अभिनय में रुचि रखने वाले विद्वान् थे, इसलिये उन्होंने शब्दशः अनुवाद की अपेक्षा अभिनेय, संक्षिप्त तथा रस्य रूपान्तरण को तरजीह दी। उन्होंने इस नाटक के अनेक मञ्चन कराये थे तथा उसमें स्वयं अनेक भूमिकाओं का निर्वहण भी किया। शब्दशः अनुवाद अध्ययन अध्यापन मात्र के लिये अधिक उपयुक्त होता इसके अतिरिक्त चूंकि ईरान में भारतविद्या के अध्ययन की परम्परा यूरोप की तरह समृद्ध नहीं रही अतः शब्दशः अनुवाद अपेक्षाकृत बहुत ही श्रमसाध्य तथा समयसाध्य कार्य होता। अतः प्रो॰ हसन ने रूपान्तर को ही श्रेयस्कर समझा।

संक्षेपण तथा रङ्गमञ्चीय सौविध्य को दृष्टि में रखकर प्रो॰ हसन ने शाकुन्तलम् के सात अङ्कों को सात दृश्यों में रूपान्तरित कर दिया है। चतुर्थ अङ्क की महत्ता को समझते हुए उन्होंने उसे दो दृश्य समर्पित किये गये हैं। पहले दृश्य में विष्कम्भक का अंश लिया गया है जिसमें दुर्वासा का शाप घटित होता है तथा दूसरे दृश्य में शकुन्तला की विदाई का अंश है। सातवें अङ्क को पूरी तरह से निकाल दिया गया है तथा इसके उद्देश्य को कथा में रोचक परिवर्तन करके पूरा किया गया है। यह परिवर्तन प्रो॰ हसन की उत्कृष्ट कविप्रतिभा को दर्शाता है। सातवें दृश्य इस प्रसङ्ग से प्रारम्भ होता है – राजा को अंगूठी देखकर शकुन्तला का स्मरण आ गया है तथा वह उसके प्रत्याख्यान का दोषी अपने को मान कर विलाप करते हुए स्वयं को अधिक्षिप्त कर रहा है। चित्रदर्शन के प्रसङ्ग के तुरन्त बाद राजा का एक द्वारपाल राजा को रक्षा के लिये पुकारता है (न कि मूल की भाँति विदूषक)। उसकी हड्डियों को कोई राक्षस अपने पञ्जों से ईंख की तरह तोड़ रहा है। और यह राक्षस इन्द्र का सारथी मातलि नहीं अपितु वस्तुतः राक्षस है जो सही में द्वारपाल को मार डालना चाहता है। राजा सक्रोध आगे बढ़ता है तथा बाण का प्रयोग करके राक्षस का वध कर देता है। इन्द्र जो वर्षा के देवता हैं आकाश से नीचे उतरते हैं और दुष्यन्त का अभिनन्दन करते हुए कहते हैं – जिस राक्षस को तुमने मारा है उसे हम कठिनाई से मार पाते, यह रहा तुम्हारी वीरता का पारितोषिक[12]। और उसी क्षण शकुन्तला अपने पुत्र के साथ आकाश से नीचे उतरती है

[10] अभिज्ञानशाकुन्तल के देवनागरी पाठ में संक्षेपीकरण के पदचिह्न (अप्रकाशित शोधपत्र) – वसन्तकुमार म॰ भट्ट।

[11] शकुन्तला या ख़ातमे मफ़क़ूद – मुकद्दमा (प्रस्तावना) – डा॰ अली असगर हिकमत

[12] *ईन दीव रा कि तू कुश्ती, मा हा मुश्किल मी तवानिस्तीम बेकुशीम। ईनक मुज़्दे हुनरे ख़ुद रा बेगीर।*
वही – पृष्ठ –४७

। यहां रूपान्तरकार ने अपनी मौलिक प्रतिभा का प्रयोग करते हुए नाटक को संक्षिप्त करने के साथ साथ उसे अस्वाभाविक तथा बाधित होने से भी बचाया है।

कथानक को संक्षिप्त करने के बावजूद प्रो॰ हसन की दृष्टि रही है कि रस परिपाक की दृष्टि से सुन्दर श्लोक छूटने न पायें। परित्यक्त अंशों में भी जो सरस तथा भावपूर्ण श्लोक हैं तो उनका सप्रयास प्रसङ्ग उपस्थापित करके उचित स्थान दिया गया है। उदाहरण के लिये यद्यपि प्रकृत रूपान्तरण में सप्तम अंक का कोई दृश्य नहीं है लेकिन भरत को देखकर अनपत्य दुष्यन्त की मनोदशा का वर्णन करने वाले श्लोक - ***"आलक्ष्यदन्तमुकुलाननिमित्तहास- ..... धन्यास्तङ्गरजसा मलिनीभवन्ति[13]"*** को अंगूठी देखने के बाद विलाप करने के अवसर पर लेकर आया गया है। इसी प्रकार विरहिणी शकुन्तला का वर्णनपरक ***वसने परिधूसरे वसाना[14]*** इत्यादि श्लोक भी नहीं छोड़ा गया है।

मूल नाटक के लम्बे लम्बे संवादों जो आजकल संकृत मञ्च के लिये भी दुरभिनेय हैं उन्हें छोड़ दिया गया है। बहुत सारे प्रसङ्गों को एक में मिला दिया गया है। उदाहरण के लिये प्रस्तावना को केवल ८ पङ्क्तियों में परिपूर्ण कर दिया गया है जिसे केवल नट बोलता है। यद्यपि इसमें ***सुभगसलिलावगाहाः*** *तथा* ***ईसीसि चुम्बिआइं भमरेहिं***[15] दोनों श्लोकों को स्थान दिया गया है।

पात्रों की संख्या बहुत कम कर दी गयी है। इस रूपान्तरण में केवल १६ पात्रों से काम चला लिया गया है जबकि मूल शाकुन्तल में कुल २० पात्र हैं। आवश्यक होने पर शेष महत्त्वपूर्ण पात्रों की सूचना मात्र दे दी गयी है ताकि कथा का प्रवाह अबाधित रहे। नटी, गौतमी आदि छोटे पात्र अनुपस्थित है। शाङ्र्गरव तथा शारद्वत में से एक ही कोई (सम्भवतः) उपलब्ध है वह भी नाम निर्देश के बिना।

इस रूपान्तरण की सबसे रोचक तथा महत्त्वपूर्ण विशेषता है कालिदासीय पद्यों के समान्तर फ़ारसी साहित्य के पद्यों का प्रयोग। यह प्रवृत्ति नयी नहीं है। महाभारत आदि ग्रन्थों के फ़ारसी अनुवादों में यह प्रवृत्ति सर्वत्र व्याप्त है[16]। रूपान्तरकार ने जिन महत्त्वपूर्ण श्लोकों जो अपने पद्यात्मक रूपान्तरण के लिये चुना है उनका भाव साम्य उन्होंने फ़ारसी के महाकवियों जैसे फ़िरदौसी ,मनूचेहरी, निज़ामी ,मौलाना रूमी, अमीर मुइज़्ज़ी, सादी, अमीर ख़ुसरो, क़ाआनी, उबैद ज़ाकानी, तथा हाफ़िज़[17] आदि कवियों की कविताओं में खोजने की चेष्टा की है। तथा वे इस प्रयास में प्रायः सफल भी रहे हैं। इस विशिष्टता के कारण यह पुनर्रचना फ़ारसी तथा संस्कृत कविता की एक तुलनात्मक प्रस्तुति बन कर सामने आ गयी है। इसके अतिरिक्त इसमें प्रो॰ हसन के फ़ारसी साहित्य का विस्तृत एवं तलस्पर्शी ज्ञान तथा उनकी रसज्ञता भी प्रतिबिम्बित होती है। इस प्रकार के प्रयास का

---

[13] अभिज्ञानशाकुन्तलम् ७ – १७

[14] वही ७–२१

[15] वही १–३ तथा १–४

[16] *.... the translators sprinkle hundreds of verses of Persian poetry throughout the Razmnamah. These articulate the sentiments of the Mahabharata in a way culturally relevant to a Persian-speaking elite and also particularly develop areas of the epic that address kingship and politics.* Audrey Treschke :The Mughal Book of War : A Persian Translation of the Sanskrit Mahabharata , p.511; Comparative Studies of South Asia, Africa and the Middle East Vol. 31, No. 2, 2011 by Duke University Press.

[17] सर्वाधिक पद्य हाफ़िज़ कवि के दीवान से लिये गये हैं।

सबसे बड़ा लाभ यह है कि साहित्यप्रिय फ़ारसी भाषी लोगों का साधारणीकरण इस नाटक के साथ बहुत सरलता से सम्भव हो जाता है ।

अनेक प्रसङ्गों में फ़ारसी पद्यों का निवेश बहुत ही सुन्दर तथा मूलानुगामी बन पड़ा है । उदाहरणार्थ, तृतीय अङ्क में शकुन्तला के विरहावस्था को दुष्यन्त छिप कर देखता है तथा उसके ***तुज्झ ण आणे णिग्घिण*** आदि पद्यों के प्रबलतर उत्तर में ***तपति तनुगात्रि हृदयम्*** आदि पद्य[18] पढ़ता हुआ स्वयं को प्रकट करता है । रूपान्तरकार इसके समान भाव वाले दो फ़ारसी के पद्य उपस्थापित करते हैं । शकुन्तला कहती है –

बुलबुल नियम कि नारे कुनम दर्दे सर दहम । परवाने अम कि सूज़मो दम बर नयावरम ॥ (मैं बुलबुल नहीं हूँ कि अपने विरह के विलाप से लोगों को त्रस्त करूँ, मैं तो वह परवाना हूं कि जल जाउंगी लेकिन लेकिन आह भी नहीं करूंगी ।)

इस पर दुष्यन्त का उत्तर है –

परवाने मन नियम कि बे यक शोले जान दहम । शम्मम् कि शब बेसूज़मो दम बर नयावरम ॥ (मैं परवाना नहीं हूं कि एक शोले को अपनी जान दे दूं , मैं तो वह प्रदीप हूं कि रात भर जलती हूं और आह भी नहीं करता ।)

उपर्युक्त पद्य हिन्द फ़ारसी परम्परा में नूरजहां तथा जहांगीर के संवाद के रूप में प्रसिद्ध हैं[19] । रूपान्तरकार ने कालिदासीय भावों को फ़ारसी रंग देकर समुचित ढंग से प्रस्तुत किया है । प्रथम अङ्क में शकुन्तला को देखकर दुष्यन्त के मुंह से अमीर ख़ुसरो की गजल कहलवाई गयी है जो भारतीय फ़ारसी साहित्य में अत्यन्त प्रसिद्ध है – *आफ़ाक़ रा गर्दीदे अम्....* इत्यादि (सारे लोकों में घूमा हूं .... परन्तु तुमसा नहीं देखा), वैखानसों के द्वारा आश्रम हरिण का शिकार रोके जाने के प्रसङ्ग में हाफ़िज़ का यह पद्य किञ्चित् परिवर्तन के साथ प्रयुक्त किया गया है –*दर् याब के नायद बाज़ तीरी कि बेशुद अज़ शस्त*[20] *(रुक जाओ, क्योंकि वह तीर जो कमान से छूट जाता है फिर वापस नहीं आता है ।)* वीर या रौद्र आदि रसों के प्रसङ्गों में महाकवि फ़िरदौसी के शाहनामे की उज्ज्वल पङ्क्तियाँ प्रयोग में लायी गयी हैं । उदाहरण के लिये प्रथम अङ्क में भौंरे पर क्रुद्ध होकर राजा कहता है – *सरश रा बेकूबम बे गुर्ज़े गरान् – कि फ़ूलाद कूबन्द आहन्गरान्* (इसके सिर को भारी गदा से इस तरह कूट दूंगा जिस तरह लोहे को लोहार कूटते हैं ।) । पञ्चम दृश्य के प्रारम्भ में कण्वशिष्य के मुख से संसार की परिवर्तनशीलता का निर्देश करने वाले श्लोक *(तेजोद्वस्ययुगपद्व्यसनोदयाभ्यां लोको नियम्यत इवात्मदशान्तरेषु)* के समकक्ष फ़िरदौसी कवि की एक पङ्क्ति का समुचित उपस्थापन किया गया है – *गही पुश्त जीनो गही जीन बे पुश्त*[21] (कभी आदमी [घोडे की] जीन पर बैठता है तो कभी जीन आदमी के ऊपर) । षष्ठ अङ्क के प्रारम्भ में हंसपदिका के उपालम्भ युक्त गीत *अहिणवमहुलोलुपो भवं* इत्यादि के रूपान्तरण लिये शिकायतों से भरे दो पद्य उपस्थापित किये गये हैं – *ज़ि यक ख़ुम दहद साक़ी ये*

---

[18] वही ३–१४ तथा ३–१५

[19] http://www.psis.blogfa.com/8912.aspx?p=2

[20] दीवाने हाफ़िज़ गजल संख्या–२७,शेर– ६ बाज़ आय कि बाज़ आयद उम्रे शुदे ये हाफ़िज़ । हर चन्द कि नायद बाज़ तीरी कि बेशुद अज़ शस्त ॥ (हे प्रिय, लौट आ ताकि हाफ़िज़ की बीती उम्र लौट आये । यद्यपि वह तीर जो कमान से छूट गया वह वापस नहीं लौटता ॥)

[21] ख़ातमे मफ़क़ूद – पृ० ३२ पङ्क्ति –१४

रूज़गार – तुरा साफ़ साफ़ो मरा दुर्द दुर्द[22] (भाग्यरूपी साक़ी एक ही मद्यकुम्भ से निकाल कर तुझे उच्चकोटि का स्वच्छ मद्य देता है जबकि मुझको बस तलछट)। तथा, *हमे चीज़ दारद दिल् आराम लेकिन – दरीग़ा कि बा मन वफ़ाई नदारद* (मेरे प्रिय के पास सारी अच्छाइयां हैं । नहीं है तो केवल एक चीज़ – मेरे प्रति एकनिष्ठा) प्रथम अङ्क के अन्त में *तुरगखुरहतस्तथा हि रेणुः* [23] के भयानक रस वाले प्रसङ्ग के लिये यह उपयुक्त पद्य प्रयुक्त है –*ख़राशीदो पूशीद शबरङ्गे शाह – ज़ि सुम पुश्ते माही ज़ि दुम रूये माह ।* (राजा के काले घोड़े ने अपने खुर से मछली[24] की पीठ को खुरच दिया तथा दुम से चाँद के तल को ढक दिया ।) इसी प्रसङ्ग में निज़ामी गञ्जवी[25] की प्रसिद्ध मस्नवी सिकन्दरनामे[26] में से यह पद्य उद्धृत किया गया है – *ज़मीन कू बिसाती बुद आरास्ते – ग़ुबारी शुद अज़ जाइ बर ख़ास्ते* । प्रियंवदा एवं अनसूया द्वारा शकुन्तला से ताप का कारण पूछने के प्रसङ्ग में मौलाना जलालुद्दीन रूमी की रुबाई (चतुष्पाद् छन्द) का एक चरण प्रस्तुत किया गया है[27] – *गर हस्त बिगू नीस्त बिगू रास्त बिगू* (अगर है तो बताओ, नहीं है तो भी बताओ, सही बताओ ।) । नाटक के अन्त में इन्द्र दुष्यन्त की प्रशंसा करते हुए फ़ारसी का एक पद्य प्रस्तुत करते हैं जो परिसंख्या अलंकार का भी सुन्दर उदाहरण है – *बे अहदत ज़ि कस नाले ई बर न ख़ास्त - बग़ैर अज़् कमान गर बेनालद रवास्त*[28] (तुम्हारे काल में किसी के मुंहसे चीख नहीं निकली , अगर निकली तो केवल धनुष से जो कि स्पृहणीय ही है ।) ।

केवल पद्य ही नहीं गद्यात्मक संवादों की फ़ारसी प्रस्तुति भी अनेक बार उन्होंने फ़ारसी साहित्य के प्रसिद्ध पद्यखण्डों से की है । *सर्वथाप्सरःसंभवैषा* का रूपान्तरण हाफ़िज़ के एक पद्य को गद्यरूप में परिवर्तित करके कहते हैं[29]–*इल्ला आदमीबचे ई कुजा शीवे ये परी दानद* (अन्यथा,मनुष्य की सन्तान को अप्सराओं का सा व्यवहार कहाँ आता है?)

कई बार फ़ारसी कविताओं की ऐसी सुन्दर पङ्क्तियों को गद्यरूप में प्रस्तुत किया गया है जिनके समान्तर पङ्क्तियां मूल में वस्तुतः नहीं थीं । जैसे – *वली ईन् कतरे ये जाले बर रुखे लाले दीदनीस्त* [30] (लाला नामक पुष्प के मुखड़े पर ओस की ये बूँदें दर्शनीय हैं)

कई उदाहरण ऐसे भी हैं जहाँ पर शाकुन्तलम् के गद्यात्मक संवादों के लिये समान भाव वाले पद्य को उपस्थापित किया गया है । उदाहरण के लिये प्रथम अङ्क में शकुन्तला द्वारा अनसूया से अपना वल्कल ढीला करने के अनुरोध करने पर प्रियंवदा का जो व्यङ्ग्य है उसके लिये निम्नोक्त शे,र प्रस्तुत किया गया है जो बहुत ही रोचक है –*चू ख़ुद कर्दन्द राज़े ख़ीश्तन फ़ाश – **अनूसी** रा चेरा बदनाम कर्दन्द (जब इन – स्तनों – ने स्वयं अपने*

---

[22] ख़ातमे मफ़क़ूद – पृ॰ ३८ पङ्क्ति –११
[23] अभिज्ञानशाकुन्तलम् १–२९
[24] प्राचीन लोगों की मान्यता थी कि पृथ्वी मछली के ऊपर स्थित है ।
[25] ये बारहवीं शताब्दी (११४४ – १२०९ ईस्वी) के प्रसिद्ध फ़ारसी कवि थे जिन्होंने फ़ारसी साहित्य में ५ महाकाव्यात्मक कवितायें (मस्नवियां) लिखने का चलन प्रारम्भ किया, जिसे खम्सा या पञ्च गञ्ज कहते हैं तथा जिसका अनुसरण बाद के अमीर खुसरो आदि बहुत से कवियों ने किया ।
[26] निज़ामी की इस मस्नवी ,जिसका दूसरा नाम शरफ़नामा भी है, में सिकन्दर द्वारा ईरान के सम्राट् दारा पर विजय प्राप्त करने की कथा वर्णित है ।
[27] ख़ातमे मफ़क़ूद – पृ॰ २६ पङ्क्ति –१३
[28] ख़ातमे मफ़क़ूद – पृ॰ ४७ पङ्क्ति –१७–१८
[29] दीवाने हाफ़िज़ग़ज़ल संख्या १७७, शेर सं॰ ६ – *बेबाख़्तम् दिले दीवाने ओ नदानिस्तम – कि आदमीबचे ई शीवे ये परी दानद*।
[30] दीवाने हाफ़िज़ग़ज़ल संख्या १३ , शेर सं॰ २ – *मी चकद जाले बर रुख़े लाले – अल् मुदाम् अल् मुदाम् या अहबाब ।*

रहस्य को प्रकट कर दिया तो फिर अनसूया को क्यों बदनाम किया गया?), यह शेर फ़ारसी के प्रसिद्ध शायर फख़्रुद्दीन इराक़ी (६१० हिजरी = १५वीं शताब्दी) का है । मूल में यह शेर इस तरह से था – *"चू ख़ुद कर्दन्द राज़े ख़ीश्तन फ़ाश – इराक़ी रा चेरा बदनाम कर्दन्द "*। इराक़ी की जगह अनूसी अर्थात् अनसूया रख दिया गया है । ध्यान रहे मूल में यह कथन प्रियंवदा का है अनसूया का नहीं परन्तु चूंकि इराक़ी की जगह छन्द[31]में प्रियंवदा नहीं आ सकता अतः इसे रूपान्तरण में अनसूया के मुख से कहलवा दिया गया है तथा अनसूया के नाम के एकदेश को इस छन्द में प्रयुक्त कर दिया गया है[32] । यह उदाहरण रूपान्तरणकार के कवि हृदय को भी स्पष्ट करता है । इन सब से स्पष्ट है कि फ़ारसी के उपयुक्त पद्यों का प्रयोग रूपान्तरणकार की दृष्टि में बहुत प्राथमिक रहा है ।

लगभग सभी प्रसङ्गों में इन फ़ारसी पद्यों का समुचित विनिवेश किया गया है । कई बार रोचक पद्यों का उपस्थापन इतना प्रमुख हो गया है कि उसके लिये कथा तन्तु में भी परिवर्तन कर दिया गया है । चतुर्थ दृश्य में शाप के प्रसङ्ग में प्रियंवदा के मुंह से दुर्वासा के हकलेपन को चिढ़ाने वाला एक क़ाआनी[iii] का एक फ़ारसी पद्य कहलवाया गया है[33] । और इसके लिये दुर्वासा को हकला भी बनाया गया है । अनसूया प्रियंवदा को मज़ाक़ उड़ाने से रोकती है । यह पूरा उपस्थापन इस शेर के लिये किया गया है ।

संवादों की भाषा अत्यन्त प्रवाहमय, लालित्यपूर्ण, अलंकृत,मुहावरेदार तथा फ़ारसी रंग से परिपूर्ण है । कुछ सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत हैं –

ईन शिकारे आहू चश्मान अज़ शिकारे आहुवान् ख़ेली बेह्तर अस्त[34]।(इन मृगों के शिकार की अपेक्षा मृगनयनियों का शिकार अधिक अच्छा है ।), *दुरुशततर अस्त दुरुस्ततर अस्त ([शकुन्तला के शरीर पर यह वल्कल] खुरदरा होता हुआ भी अधिक अच्छा है) , दुख़्तरे पीर ओ परी हस्त* (शकुन्तला पीर=विश्वामित्र और परी=मेनका की पुत्री है), *ईन परी शान् अज़ आन्जा परीशान अस्त*[35] (यह परी की तरह शान वाली वहाँ से परीशान है) , *बेदहाने दरवीशे तुर्शरू तल्ख़ख़ू ज़ूलीदे मू नयुफ़्तद*[36](कहीं [शकुन्तला] किसी बदसूरत, बुरे स्वभाव वाले , उलझे बालों वाले ऋषि के मुंह में न पड जाये ।), *अज़ परी चाबुकतरी, व,ज़ बर्गे गुल नाज़ुकतरी, व,ज़ हर चे गूयम बेहतरी*[37] *।* (परी के भी चञ्चल, गुलाब के फूलों से भी कोमल और मेरे सभी वर्णनों से अधिक अच्छी) *कमीन् मीनशीनम कमान् मी किशम्* (ओट में बैठकर धनुष खींचता हूं ।) , *अज़ दर्दे दिलम चेरा बे शुमा दर्दे दिल बेदहम*[38] (अपने हृदय के कष्ट बताकर तुम लोगों को शिरःशूल क्यों दूं) बाद अज़ ईन् हरम बर मन हराम[39]

---

[31] इस छन्द का नाम बहरे हज़ज है जिसकी गणव्यवस्था है – मफ़ाईलुन् मफ़ाईलुन् फ़ऊलुन् । (= यमाता राजभा ताराज गा गा)

[32] अनसूया के नाम को अनूसुया भी इसलिये लिखा गया है कि उसका लघुरूप अनूसी बना सकें।

[33] प्रसिद्ध फ़ारसी कवि क़ाआनी (१२२३–१२७० हिजरी, १८ वीं सदी) के इस पद्य में परस्पर बात करते हुए दो हकले पहले समझते हैं कि एक दूसरे को चिढा रहे हैं जबकि बाद में जान पाते हैं कि दोनों हकले हैं–

तु तु तू हम गु गु गुंगी म म मिस्ले म म मन
म म मन हम गु गु गुंगम म म मिस्ले तु तु तू
(तू भी मेरी तरह हकला है मैं भी तेरी तरह हकला हूं)

[34] ख़ातमे मफ़क़ूद – पृ॰ ११ पङ्क्ति – ७

[35] ख़ातमे मफ़क़ूद – पृ॰ ११ पङ्क्ति – ७–८

[36] ख़ातमे मफ़क़ूद – पृ॰ २१ पङ्क्ति – १३

[37] ख़ातमे मफ़क़ूद – पृ॰ ८ पङ्क्ति – ४–५

[38] ख़ातमे मफ़क़ूद – पृ॰ २६ पङ्क्ति –१४

[39] ख़ातमे मफ़क़ूद – पृ॰ २७ पङ्क्ति –१०

(इसके बाद रनिवास मेरे लिये निषिद्ध), *ऐ यासमन ! यासे मन बि अन्दाजे ये बी ऐतनाई ए तोस्त* [40](हे वनज्योत्स्ना, मेरी मनोव्यथा तुम्हारी उपेक्षा के अनुगुण है ।) *सदृशेक्षणवल्लभाभिः* के अनुवाद में *हमचश्मी करना*[41] इस मुहावरे का बड़ा ही सुन्दर प्रयोग किया है –*ईन आहूबचेहा कि चश्मे आन्हा बा चश्मे ऊ हमचश्मी मी कुनद* (ये हिरन के बच्चे जिनकी आंखें शकुन्तला की आंखों के साथ हमचश्मी करते हैं ।) । *षष्ठ दृश्य में ऋषियों के साथ शकुन्तला को देखकर राजा का उद्गार है – नीम महजूब व तमाम महबूब* [42] (अर्धावगुण्ठित और पूर्णतः प्रिय) ।

संस्कृत की व्यक्तिवाचक संज्ञाओं तथा विशिष्ट शब्दों का रूपान्तरकार ने व्याख्यात्मक अनुवाद किया है । ऐसा करना भिन्न संस्कृति से सम्बद्ध सामाजिकों के लिये अनिवार्य भी था । उदाहरण के लिये –*"अतः खलु प्रियंवदासि त्वम्"* में प्रियंवदा का अनुवाद चाटुकार *(तमल्लुक–गू)* भी किया है तथा यथा नाम तथा गुण *(इस्मत बा मुसम्मा हस्त)* भी जोड़ दिया है । इसी तरह, कुश के लिये *काहे नूकदार* (नोकदार घास) तथा वल्कल के लिये *लिबासी कि अज़ पूस्ते दरख़्त बाफ़्ते अन्द* (वह कपड़ा जिसे पेड़ की छाल से बुना गया हो) यह व्याख्यात्मक अनुवाद किया गया है[43]

कई बार गद्यात्मक संवादों के भावों को स्पष्टतर करने के लिये समान भावों वाले फ़ारसी पद्यों का भी प्रयोग किया गया है । प्रथम अङ्क में शकुन्तला प्रियंवदा के नर्म परिहास का उत्तर देती हुई कहती है – *"एष नूनं तवात्मगतो मनोरथः"*। इसे हाफ़िज़ के इस शे,र से स्पष्टतर कर दिया गया है –

बयाने शौक़ चि हाजत, कि हाले आतशे दिल – तवान् शिनाख्त ज़ि सूज़ी कि दर सुख़न बाशद[44]

(अभिप्राय के कथन की क्या आवश्यकता है, दिल के आग की हालत तो बातों की गर्मी से ही समझ ली जा सकती है ।)

कालिदासीय भावों को फ़ारसी भाषा में लाते समय रूपान्तरण में फ़ारसी वातावरण की सृष्टि हो गयी है जो स्वाभाविक ही है । यह कहीं भी उद्वेजक नहीं लगता अपितु रुचिकर तथा मनोरञ्जक हो गया है । स्थान स्थान पर फ़ारसी काव्य के उपमान तथा व्यञ्जना शैली नाटक को विशिष्ट परिधान प्रदान करते हैं । ईरानवासियों के सम्भाषण का सबसे विशिष्ट तथा आकर्षक पक्ष है उनकी भाषा में शिष्टाचारपरक औपचारिक वाक्यों की अधिकता । इसका सुन्दर उदाहरण है षष्ठ दृश्य में दुष्यन्त का यह वाक्य जो वह कण्व के पास से आये ऋषियों के लिये प्रयुक्त करता है –*सलामे मुहतरमाने ये मारा क़बूल बेफ़रमाईद । खुश आमदीद । सफ़ा आवुर्दीद । अह्लन् व सह्लन् । चश्मे मा रौशन दिले मा शाद । उमीदवारीम कि वक़्ते शरीफेतान् खुश बेग़ज़रद व कसी मो,तरिज़ेतान न शुदे बाशद*[45](हमारे ससम्मान प्रणाम स्वीकार करें । आपका स्वागत है । आप लोग प्रकाश लेकर आये । सुस्वागतम् । हमारी आँखें प्रकाशित और हृदय प्रसन्न हो गये । हमे विश्वास है कि आपका समय ठीक बीत रहा होगा और कोई कष्ट नहीं पहुँचा रहा होगा ।) ।

---

[40] ख़ातमे मफ़क़ूद – पृ॰ ३५ , पङ्क्ति २१

[41] हमचश्मी करना अर्थात् बराबरी करना (लुग़तनामे ये दहख़ुदा)

[42] ख़ातमे मफ़क़ूद – पृ॰ ३९ , पङ्क्ति ८–९

[43] ख़ातमे मफ़क़ूद – पृ॰ १६ पङ्क्ति – ६– ७

[44] ख़ातमे मफ़क़ूद – पृ॰ ११ पङ्क्ति – १०–११, दीवाने हाफ़िज़ – गजल संख्या –१६०

[45] ख़ातमे मफ़क़ूद – पृ॰ ४० पङ्क्ति –४–७

जब दुष्यन्त को यह पता चलता है कि शकुन्तला का ब्रह्मचर्य विवाह तक ही है तब वह प्रसन्न होकर आत्मगत कहता है – *न दुरवापेयं खलु प्रार्थना ।* इसके लिये रूपान्तरित वाक्य इस प्रकार है – तुम्हें सुसन्देश हो हे हृदय! क्योंकि यह गुप्त मुक्ता सदैव शुक्ति के अवगुण्ठन में नहीं रहने वाली है[46] ।

फ़ारसी साहित्य में प्रेयसी या प्रिय का स्वरूप भारतीय साहित्य से कुछ भिन्न है । फ़ारसी साहित्य में महबूब सामान्यतः पुरुष है जो अत्याचारी और हत्यारा होने की हद तक निर्दय है । प्रेम के प्रसंगों को अक्सर रक्तपात वाले युद्ध से उपमित किया जाता है । उर्दू साहित्य में यह रंग फ़ारसी से ही होकर आया है । इसके बहुत से सामाजिक तथा ऐतिहासिक कारण हैं । अस्तु, इस प्रकार के वर्णन प्रकृत रूपान्तरण में भी आ गये हैं जो दूषण न होकर भूषण ही लगते हैं क्योंकि इसके कारण यह रूपान्तरण फ़ारसी साहित्य के अध्येताओं के लिये अत्यन्त समान वातावरण का प्रतीत होता है तथा साधारणीकरण के लिये सहायक भी । उदाहरण के लिये प्रथम दृश्य के अन्त में शकुन्तला के चले जाने पर राजा विरहार्त होकर यह पद्य कहता है जो मूलतः शेख़ सादी के गुलिस्तान का प्रसिद्ध पद्य है[47]– *जंगजूयान् बि जोरे पञ्जे ओ कत्फ़ – दुश्मनान् रा कुशन्दो ख़ूबान् दूस्त ।* (शूरवीर पंजों और हथेलियों की शक्ति से – दुश्मनों का वध करते हैं, जबकि सुन्दरियां दोस्तों का *)* । शकुन्तला को विदा करते हुए कण्व के द्वारा कहा गया वाक्य भी इस प्रवृत्ति का सुन्दर उदाहरण है –*बिछोह का दुख हमें तलवार की तरह काट देता अगर फिर मिलने की आशा उसके धार को कुन्द न करती*[48] । यह फ़ारसी उपमानों का ही प्रभाव है कि रूपान्तरकार दुष्यन्त के मुंह से अंगूठी के लिये कहलवाते हैं – *तुम अग्नि की तरह उज्ज्वल हाथों की उन उंगलियों को छोड कर जल में कैसे गिर सकी*[49] । सप्तम दृश्य में चित्र दर्शन के प्रसङ्ग को दुष्यन्त इस फ़ारसी पद्य के साथ शकुन्तला के चित्र को मंगाता है – *रूज़े क़यामत हर कसी दर दस्त गीरद नामे ई – मन नीज़ हाजिर मी शुदम तस्वीरे जानान् दर बग़ल*[50]*।* (क़यामत के दिन सब लोग अपने कर्मों का लेखा जोखा लेकर उपस्थित होंगे और मैं भी उपस्थित होउंगा अपने बग़ल में अपने प्रिय का चित्र लिये हुए ।)

फ़ारसी वातावरण का ध्यान रखते हुए उन्होंने तृतीय दृश्य में शकुन्तला तथा दुष्यन्त के मिलन के प्रसङ्ग को जाती हुई प्रियंवदा तथा अनसूया के निम्नोक्त वाक्य पर ही परिसमाप्त कर दिया है – जब सम्पूर्ण संसार का शरणभूत तुम्हारे पास है तो तुम अशरण कैसे हो सकती हो [51]? और आगे के सभी शृङ्गारपरक संवाद निरस्त कर दिये गये हैं ।

यद्यपि कहीं कहीं कुछ लोगों को यह वातावरण अरुचिकर तथा मूल भावों की अपेक्षा हल्का भी लग सकता है ।

---

[46] *मुज्दे ऐ दिल कि ईन् लूलू ये मक्नून हमवारे दर पर्दे ये सदफ नखाहद मान्द,* वही पृष्ठ – १३ पङ्क्ति १७–१८।
[47] ख़ातमे मफ़क़ूद – पृ० १७, पङ्क्ति १३–१४
[48] ख़ातमे मफ़क़ूद – पृ० १७, पङ्क्ति
[49] ख़ातमे मफ़क़ूद – पृ० ४४, पङ्क्ति १९–२०
[50] ख़ातमे मफ़क़ूद – पृ० ४५, पङ्क्ति ३–४
[51] ख़ातमे मफ़क़ूद – पृ० २७ पङ्क्ति –१७

रूपान्तरण का सन्तोषजनक पहलू यह भी है कि फ़ारसी रंग केवल साहित्य तक ही सीमित है। भारतीय सर्वेश्वरवाद का रूपान्तरण इब्रानी एकेश्वरवाद की शब्दावली में करने की प्रवृत्ति महाभारत[52] आदि ग्रन्थों के पुराने फ़ारसी अनुवादों से लेकर आधुनिक उर्दू अनुवादों में खासकर देखी जाती है जो कभी कभी बहुत उद्वेजक भी प्रतीत होती है। परन्तु प्रकृत कृति में रूपान्तरकार ने अपनी साम्प्रदायिक धारणाओं को नहीं लादा है। इसके विपरीत रूपान्तरकार ने बड़ी ही ईमानदारी के साथ मूल ग्रन्थ की भावनाओं की सुरक्षा की है। उदाहरण के लिये *अखण्डं पुण्यानां फलमिव* का रूपान्तरण करते हुए लिखा है – *यह उन पुण्यकर्मों का परिपक्व फल है जिसे किसी पूर्वजन्म में सम्पादित किया गया था* [53]। उल्लेखनीय है कि पूर्वजन्म वाला अंश मूल में नहीं है[iv]। हां; नान्दी,भरतवाक्य तथा अन्य स्थानों पर शिव आदि देवों के प्रसङ्गों से बचा गया है। ऐसा फ़ारसी दर्शकों के अवगम की असुविधा से बचने तथा संक्षेपीकरण को ध्यान में रखकर किया गया प्रतीत होता है।

वर्णनों को फ़ारसी रुचि के अनुकूल करने के लिये रूपान्तरकार ने कहीं कहीं मूल कथा के तथ्यों में परिवर्तन भी किये हैं। उदाहरण के लिये तृतीय दृश्य में शकुन्तला के ताप का कारण पूछती हुई अनसूया और प्रियंवदा कहती हैं कि तुम्हारी दशा उसी तरह है जैसा कि हमने प्रेमी कवियों के काव्यों से जाना है[54]। उल्लेखनीय है कि मूल में अनसूया कहती है कि जैसा कि इतिहासग्रन्थों में कामियों की अवस्थायें सुनी जाती हैं वैसी तुम्हारी दशा देख रही हूँ। पञ्चम दृश्य में शकुन्तला को विदा करते हुए कण्व कहते हैं कि तुम उन बाग़ों से गुज़रो जिनके चाँदी की तरह चमकते चश्मे (सोते) आबे हयात (अमृत) के चश्मों से अधिक हृदयावर्जक हों[55]।

कहीं कहीं प्रसङ्गवशात् रूपान्तरकार उपयुक्त पद्यों को अपनी ओर से भी लेकर आये हैं जिनके समान्तर मूल में यद्यपि मूल में कोई पद्य नहीं है फिर भी इन फ़ारसी पद्यों का भाव अस्थान या अतिरिक्त नहीं लगता। उदाहरण के लिये प्रथम अङ्क में जाती हुई शकुन्तला को देखकर राजा के मुंह से रूपान्तरकार ने शेख़ सादी का यह प्रसिद्ध पद्य कहलवाया है –*" प्राणों के जाने के सम्बन्ध में लोग तरह तरह की अटकलबाज़ियाँ करते हैं। मैंने तो अपनी आंखों से देख लिया कि मेरी जान (शकुन्तला) जा रही है* [56] *"*

कई स्थानों पर श्लोकों के वास्तविक स्थानों में परिवर्तन कर दिया गया है जिसमें कोई विशेष कारण ज्ञात नहीं होता है। यद्यपि ऐसा करने से कोई कथात्मक हानि नहीं होने पायी है। उदाहरण के लिये *अनाघ्रातं पुष्पम्* तथा *अभिमुखे मयि संहृतमीक्षणम्* [57] पद्यों को दूसरे अङ्क से लाकर पहले अङ्क के अन्त में उस प्रसङ्ग में रख दिया

---

[52] *...in attempting to make sense of the religious aspects of the Mahabharata, the translators incorporate their own Islamic notions and a monotheistic God while simultaneously retaining Indic gods and spiritual elements.* Audrey Treschke :The Mughal Book of War : A Persian Translation of the Sanskrit Mahabharata , p.511; Comparative Studies of South Asia, Africa and the Middle East Vol. 31, No. 2, 2011 by Duke University Press.

[53] *या मगर मीवे ये रसीदे ये आन आमाले नीक अस्त कि दर यकी अज़ ज़िन्दगी हा ये साबिके अञ्जाम दादे ईम्* , ख़ातमे मफ़क़ूद – पृ॰ १७ पङ्क्ति–१

[54] ख़ातमे मफ़क़ूद – पृ॰ २६, पङ्क्ति २

[55] ख़ातमे मफ़क़ूद – पृ॰ ३४, पङ्क्ति १३–१४

[56] शेख़ सादी शीराज़ी (११८४–१२८३ ई॰) दीवाने ग़ज़लियात - दर रफ़्तने जान् अज़ बदन गूयन्द हर नौई सुख़न – मन ख़ुद बे चश्मे ख़ीश्तन दीदम कि जानम मी रवद ॥

[57] अभिज्ञानशाकुन्तलम् – २ – १० तथा ११

गया है जब शकुन्तला के चले जाने के बाद राजा उसके बारे में चिन्तन कर रहा है[58] । ये पद्य मूलतः राजा के साथ विदूषक के संवाद के अंश थे ।

रूपान्तरकार ने मूलस्थ श्लोकों का हर जगह फ़ारसी पद्यों से ही रूपान्तरण नहीं किया है । जहाँ उन्हें फ़ारसी साहित्य में कोई निकटतम भाव का पद्य नहीं मिला वहाँ उन्होंने उन श्लोकों का गद्यात्मक रूपान्तरण ही प्रस्तुत कर दिया है । उदाहरण के लिये उपर्युक्त स्थलों (*अनाघ्रातं पुष्पम्* इत्यादि) पर ही तीन श्लोकों का एक साथ फ़ारसी गद्य रूपान्तरण दे दिया गया है ।

जिन श्लोकों को विद्वानों ने प्रक्षिप्त माना है परन्तु उनके भाव बड़े ही सुन्दर हैं उन्हें भी इस रूपान्तरण में स्थान दिया गया है । प्रक्षिप्त पद्यों को स्पष्ट करने के लिये उन्हें कोष्ठक में रख दिया गया है[59] ।

उपर्युक्त विशिष्टताओं के साथ साथ प्रस्तुत रूपान्तरण में कुछ स्खलन तथा दुर्बलतायें भी हैं । आगे इन्हीं से सम्बद्ध कुछ महत्त्वपूर्ण पक्षों को उपस्थापित किया जा रहा है ।

प्रो॰ हसन ने अनुवाद मूल संस्कृत से न करके अनुवादों की सहायता से किया है । अतः अनेकानेक अशुद्धियों का आना स्वाभाविक है । संक्षेपीकरण के कारण यह पता लगाना भी कठिन है कि किस संस्करण के अनुवाद को आधार बनाया गया है । केवल कुछ पाठभेदों का पता अनुवाद के आधार पर अवश्य लग सकता है । उदाहरण के लिये इस अनुवाद का आधार वह संस्करण है जिसमें *तूलराशौ* की जगह *पुष्पराशौ* पाठ लिया गया है । परन्तु ये जानकारियां किसी निर्णय तक पहुँचने में अपर्याप्त हैं ।

रूपान्तरणकार को संस्कृत का प्रत्यक्ष ज्ञान नहीं होने से किन्हीं स्थलों पर अनुवाद शुद्ध नहीं हो पाया है । उदाहरण के लिये चतुर्थ अङ्क में आये हुए मलय शब्द का अनुवाद उन्होंने *कूह हा ए बाख़्तर*[60] (उत्तरी पर्वतशृङ्खला) की है जो अशुद्ध है क्योंकि मलय पर्वत दक्षिण में स्थित है । अन्तिम दृश्य में शकुन्तला के लिये *वसने परिधूसरे वसाना* का *अनुवाद विधवाओं के वस्त्र पहने हुए* किया गया है जो अशुद्ध है ।

कई स्थलों पर ऐतिहासिक तथ्यों को अशुद्ध प्रस्तुत किया गया है जैसे अनसूया शकुन्तला को मेनका तथा कण्व की पुत्री बताती है[61] । सम्भवतः यह परिवर्तन विश्वामित्र के प्रसङ्ग की गुरुता से बचने के लिये किया गया है । द्वितीय दृश्य के अन्त में राजा को राजधानी बुलाने वाला परिचारक कहता है कि महाराज को अपने जन्मदिन के प्रसङ्ग में वहां जाना आवश्यक है[62] जबकि मूल नाटक में राजमाता द्वारा चौथे दिन केवल उपवास के पारण मात्र की बात की गयी है ।

नाटक में कई बार पात्रों के संवादों को व्यतिक्रम करके प्रस्तुत कर दिया गया है जिसका कोई कारण स्पष्ट नहीं होता । इससे लगता है कि यह व्यतिक्रम रूपान्तरणकार की असावधानी से हुआ है । उदाहरण के लिये

---

[58] ख़ातमे मफ़क़ूद – पृ॰ १६ पङ्क्ति – १७ से अन्त तक तथा पृ॰ १७ पङ्क्ति १ से ७ तक ।
[59] उदाहरण के लिये पृ॰ २० तथा २१ ।
[60] ख़ातमे मफ़क़ूद – पृ॰ ३५, पङ्क्ति ७
[61] वही – पृ॰ १३ पङ्क्ति – ४
[62] ख़ातमे मफ़क़ूद – पृ॰ २१

"*वृक्षसेचने द्वे धारयसि मे*" को, जो मूल में प्रियंवदा का कथन है, अनसूया के मुख से कहलवाने का कोई प्रयोजन स्पष्ट नहीं है।

फ़ारसी काव्यों के प्रयोग तथा फ़ारसी वातावरण की सृष्टि के कारण रूपान्तरण में कहीं कहीं भौगोलिक तथ्यों की अनदेखी भी की है। उदाहरण के लिये हिमालय की तलहटी (जो कि शाकुन्तल की घटनाभूमि है) में लौंग तथा लाला (ट्यूलिप) वनस्पतियों का वर्णन[63] अनुचित है क्योंकि ये वनस्पतियां उपर्युक्त वातावरण में उत्पन्न नहीं होती हैं।

रूपान्तरण के अत्यन्त संक्षेपीकृत होने के लाभ तो हैं ही के साथ साथ कई हानियां भी हैं जो प्रस्तुत कृति में अनुभूत होती हैं। जैसे नायक तथा नायिका के अतिरिक्त अन्य पात्रों का चरित्र बहुत स्पष्ट होकर नहीं आ पाया है , जैसे प्रियंवदा, अनसूया,शाङ्र्गरव,शारद्वत तथा विदूषक आदि । लाघवाधिक्य के कारण नाटक के कई महत्त्वपूर्ण प्रसङ्ग जैसे कण्व सन्देश आदि छूट गये हैं। पात्रों की कमी तथा संवादों की अल्पता का सीधा प्रभाव नाटक की प्रभावोत्पादकता पर पड़ा है। रूपान्तरण में मूल की जीवन्तता का अभाव दिखायी पड़ता है। संवादों की कमी से रूपान्तरण में सन्दर्भीकरण के अभाव से कहीं कहीं नाटकीय घटनाओं को समझना कठिन भी हो गया है।

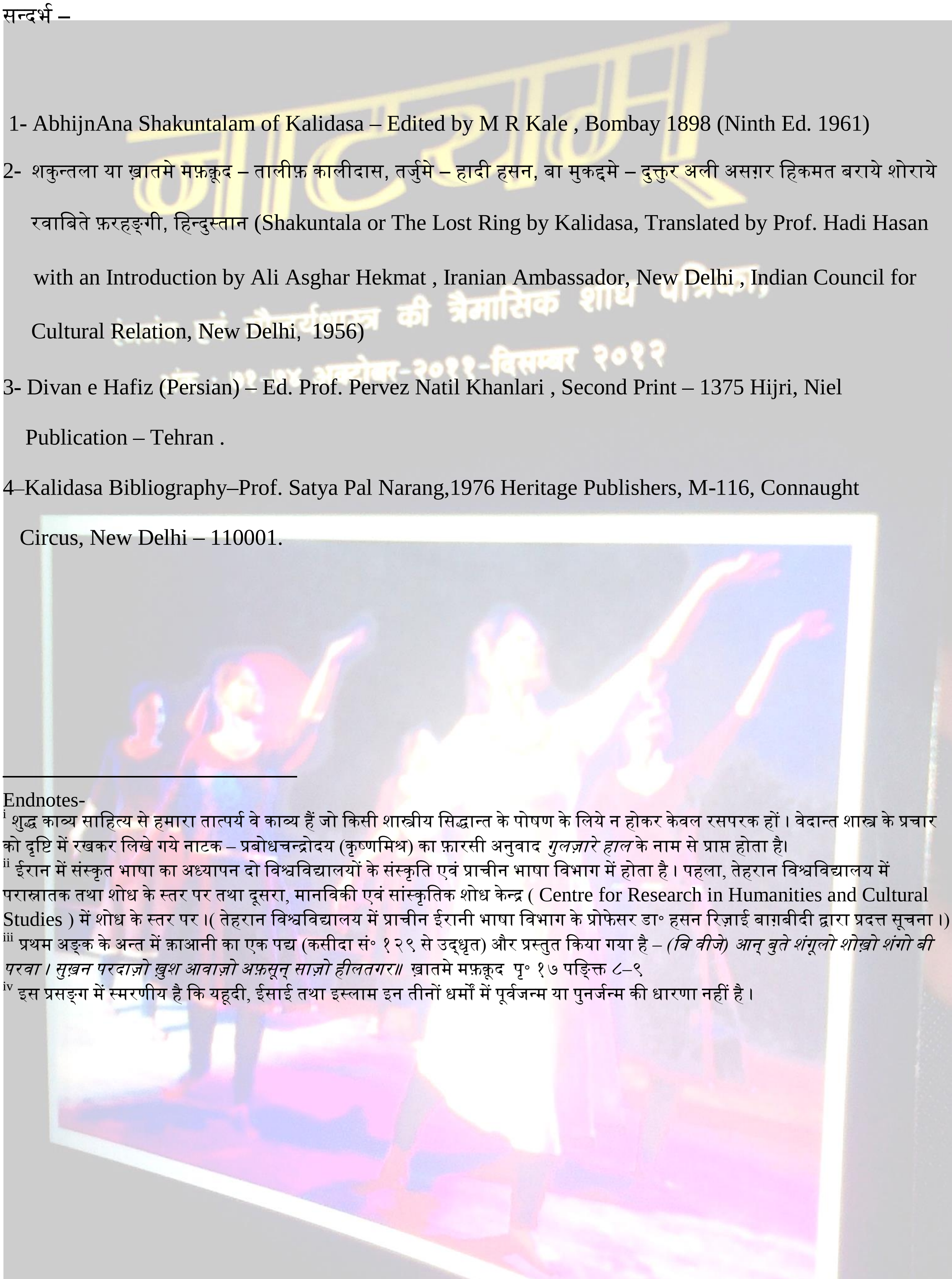
कहीं कहीं श्लोकों के गद्यात्मक रूपान्तरण करते हुए उसके कुछ अंश छोड़ दिये गये हैं जो स्पष्टतः एक अनवधानजन्य दोष मालूम पड़ता है । उदाहरण के लिये – *अनाघ्रातम् पुष्पम्* इत्यादि श्लोक का रूपान्तरण करते हुए उन्होंने इसके अन्तिम चरण (*न जाने भोक्तारं कमिह समुपस्थास्यति विधिः)* का अनुवाद नहीं किया है जो वस्तुतः दुष्यन्तगत लिप्सा की आत्यन्तिकता को व्यञ्जित करने के कारण महत्त्वपूर्ण है।

प्रस्तुत रूपान्तरण में प्रयुक्त फ़ारसी के विषय में एक दोष सर्वत्र इङ्गित किया जा सकता है और वह यह है कि यह अरबी के शब्दों तथा मुहावरों से भरी हुई है। आधुनिक फ़ारसी की दृष्टि से भाषा किञ्चित् कठिन है। परन्तु ६० वर्ष पूर्व चूँकि फ़ारसी का यही रूप रहा था अतः यह बिन्दु गर्हणीय नहीं है । एक ग़ैर ईरानी के द्वारा लिखित होने पर भी भाषा में अस्वाभाविकता नहीं आने पायी है ,यह बात प्रस्तुत रूपान्तरण में बहुत ही स्तुत्य है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि प्रो॰ हसन ने कालिदास को फ़ारसी वातावरण में बहुत ही रोचक रीति से उतारा है। कालिदासीय कविता के साथ फ़ारसी के भाव साम्य वाली कविताओं को रख कर रूपान्तरणकर्ता ने दोनों साहित्यों का अपूर्व संगम उपस्थापित किया है। मूल भावों की सुरक्षा करते हुए नाटक को लक्ष्य भाषा (फारसी) के दर्शकों के लिये निकटतम बनाना इस रूपान्तर की सबसे बड़ी विशेषता है। अपनी सीमाओं के बावजूद यह रूपान्तरण अभिज्ञानशाकुन्तलम् के शुद्धतर फ़ारसी अनुवाद के लिये पथप्रदर्शक हो सकता है जो अभी भी करणीय है।

[63] क्रमशः पृष्ठ २५, पङ्क्ति ११ तथा पृष्ठ २४, पङ्क्ति १९ ; पृ॰ ३४ पङ्क्ति १६।

सन्दर्भ –



1- AbhijnAna Shakuntalam of Kalidasa – Edited by M R Kale , Bombay 1898 (Ninth Ed. 1961)

2- शकुन्तला या ख़ातमे मफ़क़ूद – तालीफ़ कालीदास, तर्जुमे – हादी हसन, बा मुकद्दमे – दुक्तुर अली असग़र हिकमत बराये शोराये रवाबिते फ़रहङ्गी, हिन्दुस्तान (Shakuntala or The Lost Ring by Kalidasa, Translated by Prof. Hadi Hasan with an Introduction by Ali Asghar Hekmat , Iranian Ambassador, New Delhi , Indian Council for Cultural Relation, New Delhi, 1956)

3- Divan e Hafiz (Persian) – Ed. Prof. Pervez Natil Khanlari , Second Print – 1375 Hijri, Niel Publication – Tehran .

4–Kalidasa Bibliography–Prof. Satya Pal Narang,1976 Heritage Publishers, M-116, Connaught Circus, New Delhi – 110001.

Endnotes-

[i] शुद्ध काव्य साहित्य से हमारा तात्पर्य वे काव्य हैं जो किसी शास्त्रीय सिद्धान्त के पोषण के लिये न होकर केवल रसपरक हों। वेदान्त शास्त्र के प्रचार को दृष्टि में रखकर लिखे गये नाटक – प्रबोधचन्द्रोदय (कृष्णमिश्र) का फ़ारसी अनुवाद *गुलज़ारे हाल* के नाम से प्राप्त होता है।

[ii] ईरान में संस्कृत भाषा का अध्यापन दो विश्वविद्यालयों के संस्कृति एवं प्राचीन भाषा विभाग में होता है। पहला, तेहरान विश्वविद्यालय में परास्नातक तथा शोध के स्तर पर तथा दूसरा, मानविकी एवं सांस्कृतिक शोध केन्द्र (Centre for Research in Humanities and Cultural Studies) में शोध के स्तर पर ।(तेहरान विश्वविद्यालय में प्राचीन ईरानी भाषा विभाग के प्रोफेसर डा॰ हसन रिज़ाई बाग़बीदी द्वारा प्रदत्त सूचना ।)

[iii] प्रथम अङ्क के अन्त में क़ाआनी का एक पद्य (कसीदा सं॰ १२९ से उद्धृत) और प्रस्तुत किया गया है – *(बि वीजे) आन् बुते शंगूलो शोख़ो शंगो बी परवा । सुख़न परदाज़ो ख़ुश आवाज़ो अफ़सून् साज़ो हीलतगर॥* ख़ातमे मफ़क़ूद पृ॰ १७ पङ्क्ति *८–९*

[iv] इस प्रसङ्ग में स्मरणीय है कि यहूदी, ईसाई तथा इस्लाम इन तीनों धर्मों में पूर्वजन्म या पुनर्जन्म की धारणा नहीं है।